11105CH05

अध्याय 5

समाजशास्त्र–अनुसंधान पद्धतियाँ

I

परिचय

क्या आपको कभी आश्चर्य हुआ है कि समाजशास्त्र जैसे विषय को सामाजिक विज्ञान क्यों कहा जाता हैं? अन्य किसी विषय की तुलना में समाजशास्त्र उन वस्तुओं के बारे में ज़्यादा चर्चा करता है जिनके बारे में अधिकांश लोग पहले से जानते हैं। हम सब एक समाज में रहते हैं तथा हम पहले से ही समाजशास्त्र की विषय–वस्तु सामाजिक समूहों, संस्थाओं, मानकों, संबंधों तथा अन्य के बारे में अपने अनुभवों के द्वारा काफ़ी हद तक जानते हैं। तब यह पूछना उचित लगता है कि वह क्या है जो समाजशास्त्रियों को समाज के अन्य लोगों से अलग बनाता हैं। उन्हें सामाज–विज्ञानी क्यों कहा जाए?

अन्य सभी वैज्ञानिक विषयों की तरह यहाँ भी पद्धतियाँ या कार्यविधियाँ महत्त्वपूर्ण हैं जिनके द्वारा ज्ञान एकत्रित होता है। अंतिम विश्लेषण में समाजशास्त्री आम व्यक्तियों से अलग होने का दावा कर सकते हैं। इसका कारण यह नहीं है कि वे कितना जानते हैं या वे क्या जानते हैं, परंतु इसका कारण है कि वे अपने ज्ञान को कैसे प्राप्त करते हैं। यही एक कारण है कि समाजशास्त्र में पद्धति का विशेष महत्त्व है।

पिछले अध्याय में आपने देखा है कि समाजशास्त्र की लोगों के जीवंत अनुभवों में गहरी रुचि है। उदाहरण के लिए, मित्रता या धर्म या बाज़ारों में मोल–भाव करने जैसी सामाजिक प्रघटनाओं का अध्ययन करते समय समाजशास्त्री सिर्फ़ दर्शकों का प्रेक्षण ही नहीं करना चाहते अपितु इसमें शामिल लोगों की भावनाएँ तथा विचार भी जानना चाहते हैं। समाजशास्त्री उन लोगों के मत को अपनाना चाहते हैं जिनका वे अध्ययन करते हैं तथा विश्व को उनकी आँखों से देखना चाहते हैं। विभिन्न संस्कृतियों में लोगों के लिए मैत्री का अर्थ क्या है? जब कोई व्यक्ति कोई विशेष अनुष्ठान करता है तो वह धार्मिक व्यक्ति क्या सोचता है कि वह क्या कर रहा है? एक दुकानदार तथा ग्राहक बेहतर मूल्य पाने के लिए शब्दों तथा भावभंगिमाओं को

परस्पर कैसे समझते हैं? ऐसे प्रश्नों का उत्तर इसमें शामिल व्यक्तियों के जीवंत अनुभव का एक भाग है तथा इनमें समाजशास्त्र की गहन रुचि है। अध्ययन में जो लोग शामिल हैं और जो लोग शामिल नहीं हैं, दोनों के मतों को समझने की आवश्यकता समाजशास्त्र में पद्धति के विशेष महत्त्व का एक अन्य कारण है।

2

कुछ पद्धतिशास्त्रीय मुद्दे

हालाँकि 'पद्धति' शब्द के स्थान पर इसे (समानार्थक होने के कारण) प्राय: साधारण रूप से प्रयोग किया जाता है। वास्तव में 'पद्धतिशास्त्र' शब्द का आशय अध्ययन की पद्धति से है। पद्धतिशास्त्रीय मुद्दों या प्रश्नों का संबंध वैज्ञानिक ज्ञान इकट्ठा करने की सामान्य समस्या के बारे में है जो किसी विशेष पद्धति, तकनीक या कार्यविधि से परे है। हम उन तरीकों के बारे में जानने का प्रयास करेंगे जिनसे समाजशास्त्री वह ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करता है जो वैज्ञानिक होने का दावा कर सकता हो।

समाजशास्त्र में वस्तुनिष्ठता तथा व्यक्तिपरकता

दैनिक जीवन की भाषा में 'वस्तुनिष्ठ' का आशय पूर्वाग्रह रहित, तटस्थ या केवल तथ्यों पर आधारित होता है। किसी भी वस्तु के बारे में वस्तुनिष्ठ होने के लिए हमें वस्तु के बारे में अपनी भावनाओं या मनोवृत्तियों को अवश्य अनदेखा करना चाहिए। दूसरी तरफ़ 'व्यक्तिपरक' से तात्पर्य है कुछ ऐसा जो व्यक्तिगत मूल्यों तथा मान्यताओं पर आधारित हो। जैसाकि आपने पहले भी सीखा होगा कि सभी विज्ञानों से 'वस्तुनिष्ठ' होने व केवल तथ्यों पर आधारित पूर्वाग्रह रहित ज्ञान उपलब्ध कराने की आशा की जाती है, परंतु प्राकृतिक विज्ञानों की तुलना में समाजिक विज्ञानों में ऐसा करना बहुत कठिन है।

उदाहरण के लिए, जब एक भू-वैज्ञानिक चट्टानों का अध्ययन करता है या एक वनस्पतिशास्त्री पौधों का अध्ययन करता है तो वे सावधान रहते हैं कि उनके व्यक्तिगत पूर्वाग्रह या मान्यताएँ उनके काम को प्रभावित न कर पाएँ। उन्हें तथ्यों को वैसे ही प्रस्तुत करना चाहिए जैसे वे हैं। उदाहरण के लिए, उन्हें अपने अनुसंधान कार्य के परिणामों पर किसी विशेष वैज्ञानिक सिद्धांत या सिद्धांतवादी के प्रति अपनी पसंद का प्रभाव नहीं पड़ने देना चाहिए। तथापि भू-वैज्ञानिक तथा वनस्पतिशास्त्री स्वयं उस संसार का हिस्सा नहीं होते जिनका वे अध्ययन करते हैं, जैसे चट्टानों या पौधों की प्राकृतिक दुनिया। इसके विपरीत समाज-विज्ञानी उस संसार का अध्ययन करते हैं जिसमें वे स्वयं रहते हैं—जो मानव संबंधों की सामाजिक दुनिया है। इससे समाजशास्त्र जैसे सामाजिक विज्ञान में वस्तुनिष्ठता की विशेष समस्या उत्पन्न होती है।

सबसे पहले पूर्वाग्रह की स्पष्ट समस्या है क्योंकि समाजशास्त्री भी समाज के सदस्य हैं, उनकी भी लोगों की तरह सामान्य पसंद तथा नापसंद होती है। पारिवारिक संबंधों का अध्ययन करने वाला समाजशास्त्री भी स्वयं एक परिवार का सदस्य होगा तथा उसके अनुभवों का उस

पर प्रभाव हो सकता है। यहाँ तक कि समाजशास्त्री को अपने अध्ययनशील समूह के साथ कोई प्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुभव न होने पर भी उसके अपने सामाजिक संदर्भों के मूल्यों तथा पूर्वाग्रहों से प्रभावित होने की संभावना रहती है। उदाहरणार्थ; अपने से अलग किसी जाति या धार्मिक समुदाय का अध्ययन करते समय समाजशास्त्री उस समुदाय की कुछ मनोवृत्तियों से प्रभावित हो सकता है जोकि उसके अपने अतीत या वर्तमान के सामाजिक वातावरण में प्रचलित हैं। समाजशास्त्री इन खतरों से कैसे बचते हैं?

इसकी पहली पद्धति अनुसंधान के विषय के बारे में अपनी भावनाओं तथा विचारों को लगातार कठोरता से जाँचना है। अधिकांशत: समाजशास्त्री अपने कार्य के लिए किसी बाहरी व्यक्ति के दृष्टिकोण को ग्रहण करने का प्रयास करते हैं। वे अपने आपको तथा अपने अनुसंधान कार्य को दूसरे की आँखों से देखने का प्रयास करते हैं। इस तकनीक को 'स्ववाचक' या कभी–कभी 'आत्मवाचक' कहते हैं। समाजशास्त्री लगातार अपनी मनोवृत्तियों तथा मतों की स्वयं जाँच करते रहते हैं। वह अन्य व्यक्तियों के मतों को सावधानीपूर्वक अपनाते रहते हैं, विशेष रूप से उनके मतों को जो उनके अनुसंधान का विषय होते हैं।

आत्मवाचकता का एक व्यावहारिक पहलू है किसी व्यक्ति द्वारा किए जा रहे कार्य का सावधानीपूर्वक दस्तावेज़ीकरण करना। अनुसंधान पद्धतियों की श्रेष्ठता के दावे का एक हिस्सा सभी कार्यविधियों के दस्तावेज़ीकरण तथा साक्ष्य के सभी स्रोतों के औपचारिक संदर्भ में निहित है। यह सुनिश्चित करता है कि हमारे द्वारा किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचने हेतु किए गए उपायों को अन्य अपना सकते है तथा वे स्वयं देख सकते हैं, हम सही हैं या नहीं। इससे हमें अपनी सोच या तर्क की दिशा को परखने या पुन: परखने में भी सहायता मिलती है।

तथापि समाजशास्त्री स्ववाचक होने का कितना भी प्रयास करे, अवचेतन पूर्वाग्रह की संभावना सदा रहती है। इस संभावना से निपटने के लिए समाजशास्त्री अपनी सामाजिक पृष्ठभूमि के उन लक्षणों को स्पष्ट रूप में उल्लिखित करते हैं जो कि अनुसंधान के विषय पर संभावित पूर्वाग्रह के स्रोत के रूप में प्रासंगिक हो सकते हैं। यह पाठकों को पूर्वाग्रह की संभावना से सचेत करता है तथा अनुसंधान अध्ययन को पढ़ते समय यह उन्हें मानसिक रूप से इसकी 'क्षतिपूर्ति' करने के लिए तैयार करता है। (अध्याय 1 के उस अनुभाग (पृष्ठ 8–9) को आप पुन: पढ़ सकते हैं, जिसमें सामान्य बौद्धिक ज्ञान तथा समाजशास्त्र में अंतर के बारे में चर्चा की गई है।)

समाजशास्त्र में वस्तुनिष्ठता के साथ एक अन्य समस्या यह तथ्य है कि सामान्यत: सामाजिक विश्व में 'सत्य' के अनेक रूप होते हैं। वस्तुएँ विभिन्न लाभ के बिंदुओं से अलग–अलग दिखाई देती हैं तथा इसी कारण से सामाजिक विश्व में सच्चाई के अनेक प्रतिस्पर्धी रूप या व्याख्याएँ शामिल हैं। उदाहरणार्थ; 'सही' कीमत में बारे में एक दुकानदार तथा एक ग्राहक के अत्यंत अलग–अलग विचार हो सकते हैं, एक युवा

व्यक्ति तथा एक बुजुर्ग व्यक्ति के लिए 'अच्छे भोजन' या इसी तरह से अन्य विषयों के बारे में अलग-अलग विचार हो सकते हैं। कोई भी ऐसा सरल तरीका नहीं हैं जिससे किसी विशेष व्याख्या के सत्य या अधिक सही होने के बारे में निर्णय लिया जा सके एवं प्रायः इन शर्तों के तहत सोचना भी लाभप्रद नहीं होता। वास्तव में समाजशास्त्र इस तरीके से जाँचने का प्रयास भी नहीं करता क्योंकि इसकी वास्तविक रुचि इसमें होती है कि लोग क्या सोचते हैं तथा वे जो सोचते हैं, वैसा क्यों सोचते हैं।

क्रियाकलाप-1

क्या आप दूसरों को जैसे देखते हैं, उसी तरह अपने आप को भी देख सकते हैं? आप अपने बारे में–(क) अपने श्रेष्ठ मित्र, (ख) अपने विरोधी, (ग) अपने शिक्षक के दृष्टिकोण से एक संक्षिप्त विवरण लिखिए। आपको आवश्यक तौर पर खुद को उनकी जगह रखकर उनकी तरह अपने बारे में सोचना होगा। अपना विवरण देते समय अपने लिए 'मैं' या 'मुझे' के स्थान पर अन्य व्यक्ति के रूप में 'वह' लिखना याद रखें। इसके पश्चात आप अपनी कक्षा के सहयोगियों द्वारा लिखे गए समान विवरणों को देखें। एक दूसरे के विवरणों पर चर्चा करें। आप इन्हें कितना सही या रोचक पाते हैं? क्या इन विवरणों में कोई आश्चर्यजनक बात है?

एक अन्य समस्या स्वयं समाजिक विज्ञानों में उपस्थित बहुविध मतों से उत्पन्न होती है। समाजिक विज्ञान की तरह समाजशास्त्र भी एक 'बहु-निर्देशात्मक' विज्ञान है। इसका अर्थ है कि इस विषय में प्रतिस्पर्धी तथा परस्पर विरोधी विचारों वाले क्षेत्र विद्यमान हैं। (समाज के विरोधी सिद्धांतों के विषय में अध्याय 2 में हुई चर्चा को याद करें)।

इन सबसे समाजशास्त्र में वस्तुनिष्ठता एक बहुत कठिन तथा जटिल वस्तु बन जाती है। वास्तव में, वस्तुनिष्ठता की पुरानी धारणा को व्यापक तौर पर एक पुराना दृष्टिकोण माना जाता है। समाज-विज्ञानी अब विश्वास नहीं करते कि 'वस्तुनिष्ठता एवं अरुचि' की पारंपरिक धारणा, समाजिक विज्ञान में प्राप्त की जा सकती है। वास्तव में ऐसे आदर्श भ्रामक हो सकते हैं। इसका यह अर्थ नहीं है कि समाजशास्त्र के माध्यम से कोई लाभप्रद ज्ञान प्राप्त नहीं किया जा सकता या वस्तुनिष्ठता एक व्यर्थ संकल्पना है। इसका तात्पर्य है कि वस्तुनिष्ठता को पहले से प्राप्त अंतिम परिणाम के स्थान पर लक्ष्य प्राप्ति हेतु निरंतर चलती रहने वाली प्रक्रिया के रूप में सोचा जाना चाहिए।

बहुविधि पद्धतियाँ तथा पद्धतियों का चयन

क्योंकि समाजशास्त्र में बहुविध सच्चाइयाँ तथा बहुविध दृष्टिकोण होते हैं, यह आश्चर्य का विषय नहीं है कि इसमें बहुविध पद्धतियाँ भी हैं। समाजशास्त्रीय सच्चाई की ओर कोई भी एक रास्ता नहीं जाता। हालाँकि विभिन्न प्रकार के अनुसंधान संबंधी प्रश्नों को हल करने के लिए अनेक विधियाँ हैं जो अधिकतम या न्यूनतम उपयोगी हैं। तथापि प्रत्येक पद्धति का अपना महत्त्व तथा कमज़ोरी होती है। अतः पद्धतियों

की श्रेष्ठता या निम्नता के बारे में तर्क करना निरर्थक है। यह जानना ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है कि पूछे जा रहे प्रश्न का उत्तर देने के लिए चयन की गई पद्धति क्या उपयुक्त है।

उदाहरणार्थ; यदि कोई यह जानना चाहे कि क्या अधिकांश भारतीय परिवार अभी तक 'संयुक्त परिवार' हैं तो इसके लिए जनगणना या सर्वेक्षण श्रेष्ठ पद्धतियाँ होंगी। तथापि यदि कोई व्यक्ति संयुक्त और मूल परिवारों में स्त्रियों की स्थिति की तुलना करना चाहे तो साक्षात्कार, वैयक्तिक अध्ययन या सहभागी प्रेक्षण उपयुक्त पद्धतियाँ हो सकती हैं।

समाजशास्त्रियों द्वारा सामान्यतया प्रयोग की जाने वाली विभिन्न पद्धतियों का वर्गीकरण या श्रेणीकरण करने के बहुत से तरीके हैं। उदाहरण के लिए मात्रात्मक तथा गुणात्मक पद्धतियों में अंतर करना परंपरागत है—पहली पद्धति में गणना की जाती है या घटकों को नापा (समानुपात, औसत तथा इसी तरह से अन्य) जाता है जबकि दूसरी पद्धति अत्यधिक अमूर्त तथा मुश्किल से नापी जाने वाली प्रघटनाओं जैसेकि मनोवृत्तियों, भावनाओं एवं इसी तरह अन्य का अध्ययन करती है। पद्धतियों के बीच का संबंधित अंतर है कि एक वह पद्धति जो प्रेक्षण किए जा सकने वाले व्यवहार का अध्ययन करती है और दूसरी प्रेक्षण न किए जा सकने वाले अर्थों, मूल्यों तथा अन्य व्याख्यात्मक चीज़ों का अध्ययन करती है।

पद्धतियों के वर्गीकरण का अन्य तरीका इनके बीच आँकड़ों के प्रकार के आधार पर अंतर करने का है। एक 'द्वितीयक' या पहले से उपलब्ध आँकड़ों (दस्तावेज़ों के रूप में या अन्य रिकार्डों तथा कलाकृतियों) पर निर्भर हैं दूसरी वह जो नए या 'प्राथमिक' आँकड़े बनाती हैं। अतएव ऐतिहासिक पद्धतियाँ परंपरागत रूप में भू–लेखागारों में पाई जाने वाली द्वितीयक सामग्री पर निर्भर है जबकि साक्षात्कार से प्रारंभिक आँकड़ों की जानकारी प्राप्त होती है। इसी तरह अन्य पद्धतियाँ भी हैं।

वर्गीकरण का एक अन्य तरीका 'व्यष्टि' तथा 'समष्टि' पद्धतियों को अलग करने का है। इनमें से पहली पद्धति में सामान्यतः एक अकेला अनुसंधानकर्ता होता है, जो छोटे तथा घनिष्ठ परिवेश में कार्य करता है। अतः साक्षात्कार तथा सहभागी प्रेक्षण को 'व्यष्टि' पद्धतियाँ माना जाता है। 'समष्टि' पद्धतियाँ वे हैं जो बड़े पैमाने वाले अनुसंधानों जिसमें अधिक संख्या में अन्वेषक तथा उत्तरदाता शामिल होते हैं, का समाधान कर सकती है। 'समष्टि' पद्धति का सबसे आम उदाहरण सर्वेक्षण अनुसंधान है यद्यपि कुछ ऐतिहासिक पद्धतियाँ भी समष्टि प्रघटनाओं का अध्ययन कर सकती हैं।

वर्गीकरण का ढंग चाहे जो हो, यह याद रखना आवश्यक है कि यह एक परंपरा का विषय है। विभिन्न प्रकार की पद्धतियों के बीच विभाजक रेखा को ज़्यादा तीक्ष्ण होने की आवश्यकता नहीं है। प्रायः एक पद्धति को दूसरी पद्धति में बदलना या किसी एक को दूसरी के साथ अनुपूरक की तरह इस्तेमाल करना संभव है।

सामान्यतया पद्धति का चयन अनुसंधान के प्रश्नों की प्रकृति, अनुसंधानकर्ता की प्राथमिकताओं तथा समय और/या संसाधनों के प्रतिबंधों के

आधार पर किया जाता है। समाजिक विज्ञान में वर्तमान प्रवृत्ति विभिन्न अनुकूल बिंदुओं से समान अनुसंधान समस्या पर बहुविध पद्धतियों का प्रयोग करना है। इसी को कभी–कभी 'त्रिभुजन' कहा जाता है, अर्थात किसी वस्तु को विभिन्न दिशाओं से दोहराना या उसको ठीक तरह से परिभाषित करना। इस तरीके से एक दूसरे की सहायता के लिए विभिन्न पद्धतियाँ प्रयोग की जा सकती हैं ताकि सिर्फ़ एक पद्धति के प्रयोग से प्राप्त परिणामों की तुलना में और अधिक अच्छे परिणाम प्राप्त किए जा सकें।

चूँकि समाजशास्त्र की सुस्पष्ट पद्धतियाँ वही होती हैं जिनसे 'प्रारंभिक' आँकड़े प्राप्त करने में सहायता मिलती है, अतः यहाँ इन्हीं की चर्चा की गई है। यहाँ तक कि 'क्षेत्रीय कार्य' की श्रेणी पर आधारित पद्धतियों में भी हम आपको सबसे प्रसिद्ध पद्धति सर्वेक्षण, साक्षात्कार तथा सहभागी प्रेक्षण से परिचित कराएँगे।

सहभागी प्रेक्षण (अवलोकन)

समाजशास्त्र में विशेष रूप से सामाजिक मानवविज्ञान में लोकप्रिय सहभागी प्रेक्षण का आशय एक विशेष पद्धति से है जिसके द्वारा समाजशास्त्री उस समाज, संस्कृति तथा उन लोगों के बारे में सीखता है जिनका वह अध्ययन कर रहा होता है (अध्याय 1 में समाजशास्त्र तथा सामाजिक मानवविज्ञान पर की गई चर्चा का स्मरण करें)।

यह पद्धति अन्य पद्धतियों से कई प्रकार से अलग है। सर्वेक्षणों या साक्षात्कारों जैसी प्रारंभिक आँकड़े एकत्र करने वाली अन्य पद्धतियों के विपरीत क्षेत्रीय कार्य में अनुसंधान के विषय के साथ लंबी अवधि की अंत:क्रिया शामिल होती है। सामान्यतः समाजशास्त्री या समाजिक मानवविज्ञानी कई महीने लगभग एक वर्ष या कभी–कभी इससे ज़्यादा भी उन लोगों के बीच उनकी तरह बनकर व्यतीत करते हैं जिनका उन्हें अध्ययन करना होता है। 'बाहरी' अर्थात वहाँ का निवासी न होने के कारण मानवविज्ञानी को अपने आपको मूल निवासियों की संस्कृति में उनकी भाषा सीखकर तथा उनके प्रतिदिन के जीवन में निकट से सहभागी बनकर उनमें ही मिलना पड़ता है ताकि समस्त स्पष्ट तथा अस्पष्ट ज्ञान तथा कौशल को प्राप्त किया जा सके जोकि 'अंदर के निवासियों' के पास होता है। यद्यपि समाजशास्त्री या मानवविज्ञानी की रुचि कुछ विशेष क्षेत्रों में होती है 'सहभागी प्रेक्षण' क्षेत्रीय कार्य का समग्र लक्ष्य समुदाय के 'जीने के संपूर्ण तरीके' सीखना होता है। वास्तव में यह एक बच्चे के उदाहरण जैसा है जिसमें समाजशास्त्री तथा मानवविज्ञानी से आशा की जाती है कि वह अपने अपनाए गए समुदायों के बारे में प्रत्येक वस्तु ठीक उसी प्रकार संपूर्ण तरीके से सीखे जैसेकि एक छोटा बच्चा संसार के बारे में सीखता है।

सहभागी प्रेक्षण को प्रायः 'क्षेत्रीय कार्य' कहा जाता है। यह शब्द मूलतः वनस्पतिशास्त्र, प्राणिविज्ञान, भू–विज्ञान आदि जैसे विशेष प्राकृतिक विज्ञानों की देन है। इन विषयों में, वैज्ञानिक केवल प्रयोगशाला में ही कार्य नहीं करते बल्कि उन्हें अपने विषयों (जैसेकि चट्टानों, कीटों या पौधों) के बारे में जानने के लिए 'क्षेत्र' में भी जाना पड़ता है।

3

सामाजिक मानवविज्ञान में क्षेत्रीय कार्य

एक कठोर वैज्ञानिक पद्धति के रूप में क्षेत्रीय कार्य ने मानवविज्ञान को सामाजिक विज्ञान के रूप में स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आरंभिक मानवविज्ञानी आदिम संस्कृतियों में शौकिया पर उत्साही रुचि रखते थे। वे 'किताबी विद्वान' थे। जिन्होंने दूरस्थ समुदायों के बारे में (जिनकी उन्होंने कभी यात्रा नहीं की) यात्रियों, उपदेशकों, औपनिवेशिक प्रशासकों, सिपाहियों तथा उस स्थान पर गए अन्य व्यक्तियों द्वारा लिखी गई रिपोर्टों तथा विवरणों से उपलब्ध सूचनाओं को इकट्ठा तथा सुव्यवस्थित किया। उदाहरणार्थ, जेम्स फ्रेज़र की प्रसिद्ध पुस्तक द *गोल्डन बॉग* जिसने अनेक आरंभिक मानवविज्ञानियों को प्रेरित किया था, पूरी तरह से ऐसे द्वितीय श्रेणी के विवरणों पर आधारित थी। इसी तरह एमिल दुर्खाइम का आदिम धर्म पर किया गया कार्य भी द्वितीय श्रेणी के विवरणों पर आधारित था। उन्नीसवीं सदी के अंत में तथा बीसवीं सदी के पहले दशक में बहुत से आरंभिक मानवविज्ञानियों ने जिनमें कुछ व्यक्ति पेशे से प्रकृति वैज्ञानिक थे, जनजातीय भाषाओं, प्रथाओं, अनुष्ठानों तथा आस्थाओं का व्यवस्थित ढंग से सर्वेक्षण आरंभ किया। दूसरी श्रेणी के विवरणों पर निर्भरता को अविश्वसनीय माना जाने लगा तथा स्वयं किए गए कार्यों से प्राप्त श्रेष्ठ परिणामों ने इस बढ़ते हुए पूर्वाग्रह को स्थापित होने में सहायता की (अगले पृष्ठ पर दिए गए बॉक्स को देखें)।

सन् 1920 से सहभागी प्रेक्षण या क्षेत्रीय कार्य को सामाजिक मानवविज्ञान के प्रशिक्षण और मुख्य पद्धति, जिसके द्वारा ज्ञान की प्राप्ति होती है, का एक अनिवार्य हिस्सा माना जाने लगा। लगभग सभी प्रभावशाली विद्वानों ने अपने क्षेत्र में ऐसे क्षेत्रीय कार्य किए हैं। वास्तव में बहुत से समुदाय या भौगोलिक स्थान क्षेत्रीय कार्य के प्रतिष्ठित उदाहरणों से संबंधित होने के कारण विषय में लोकप्रिय बन गए।

वास्तव में सामाजिक मानवविज्ञानी क्षेत्रीय कार्य करते समय क्या करता हैं? सामान्यत: वह समुदाय, जिसका वह अध्ययन करता है, की जनगणना कर कार्य प्रारंभ करता है। इसमें समुदाय में रह रहे सभी लोगों के बारे में विस्तृत सूची, जिसमें उनके लिंग, आयु, वर्ग तथा परिवार जैसी सूचना भी है, बनाना शामिल है। इसके साथ गाँव या रहने की जगह का भौतिक रूप से नक्शा बनाने का प्रयास भी किया जा सकता है, जिसमें घरों तथा समाजिक तौर पर संबंधित अन्य जगहों की स्थिति भी शामिल होती है। अपने क्षेत्रीय कार्य की प्रारंभिक अवस्था में मानवविज्ञानियों द्वारा प्रयुक्त सबसे महत्त्वपूर्ण तकनीक है–समुदाय की वंशावली बनाना। यह जनगणना द्वारा प्राप्त सूचना पर आधारित हो सकती है परंतु इसका आगे विस्तार होता है क्योंकि इसके आधार पर प्रत्येक सदस्य का वंशवृक्ष बनाना तथा जहाँ तक संभव हो सके वंशवृक्ष का पीछे की तरफ़ विस्तार करना शामिल होता है। उदाहरण के लिए, किसी भी परिवार या घर के मुखिया से उसके रिश्तेदारों–उसकी अपनी पीढ़ी में भाइयों, बहनों तथा चचेरे भाई-बहनों

ब्रोनिस्लाव मैलिनोवस्की तथा क्षेत्रीय कार्य की 'खोज'

हालाँकि वह पहले व्यक्ति नहीं थे जिन्होंने इस पद्धति का प्रयोग किया था–अन्य विद्वानों द्वारा विश्वभर में इसे विभिन्न रूपों में जाँचा जा चुका था–ब्रोनिस्लाव मैलिनोवस्की, पोलेंड के एक मानवविज्ञानी थे जो ब्रिटेन में बसे हुए थे। ऐसा व्यापक तौर पर माना जाता है कि उन्होंने क्षेत्रीय कार्य को सामाजिक मानवविज्ञान की एक विशेष पद्धति के रूप में स्थापित किया। सन् 1914 में यूरोप में प्रथम विश्वयुद्ध के शुरू होने के समय वह ऑस्ट्रेलिया की यात्रा पर थे जोकि उस समय ब्रिटिश साम्राज्य का एक भाग था। क्योंकि युद्ध में पोलेंड जर्मनी के साथ था, इसे ब्रिटेन द्वारा शत्रु घोषित किया गया था तथा पोलेंड का नागरिक होने के कारण मैलिनोवस्की तकनीकी रूप से 'शत्रु देश का निवासी' बन गए। वास्तव में वह *लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स* में एक सम्मानित प्रोफ़ेसर थे तथा ब्रिटिश तथा ऑस्ट्रेलिया के सत्ताधारियों के साथ उसके बहुत अच्छे संबंध थे। परंतु तकनीकी रूप से 'शत्रु देश का निवासी' होने के कारण कानून के अनुसार उनका एक विशेष जगह में ही सीमित या 'नज़रबंद' रहना ज़रूरी था।

मैलिनोवस्की अपने मानववैज्ञानिक अनुसंधान के लिए ऑस्ट्रेलिया की अनेक जगहों तथा दक्षिणी प्रशांत महासागर के द्वीपों की यात्रा करना चाहते थे। अत: उन्होंने सत्ताधारियों से अनुरोध किया कि उनकी नज़रबंदी दक्षिणी प्रशांत के ट्रोब्रियांड द्वीपों में करने की अनुमति दी जाए जोकि ब्रिटिश–ऑस्ट्रेलिया के कब्ज़े में थे। इस पर ऑस्ट्रेलिया सरकार ने सहमति प्रदान कर दी तथा उनकी यात्रा के लिए वित्तपोषण भी दिया तथा मैलिनोवस्की ने ट्रोब्रियांड द्वीपों में डेढ़ वर्ष व्यतीत किया। वह वहाँ के मूल गाँवों में एक तंबू में रहें, स्थानीय भाषा सीखी तथा उनकी संस्कृति के बारे में सीखने के लिए वहाँ के 'मूल निवासियों' के साथ गहन अंत:क्रिया की। उन्होंने अपने प्रेक्षणों का सावधानीपूर्वक विस्तृत रिकार्ड रखा तथा दैनिक डायरी भी बनाई। बाद में उन्होंने इन क्षेत्रीय टिप्पणियों तथा डायरियों के आधार पर ट्रोब्रियांड संस्कृति पर किताबें लिखीं। ये पुस्तकें शीघ्र लोकप्रिय हो गईं तथा आज भी इन्हें क्लासिक्स माना जाता है।

उनके ट्रोब्रियांड अनुभव से पहले भी मैलिनोवस्की ने विश्वास व्यक्त किया था कि मानवविज्ञान का भविष्य मानवविज्ञान तथा मूल संस्कृति के बीच बिना किसी मध्यस्थ के सीधी अंत:क्रिया पर आधारित हैं। वह मानते थे कि यह विषय तब तक प्रतिभा संपन्न शौक की स्थिति से आगे नहीं बढ़ेगा जब तक कि इसके अभ्यासकर्ता भाषा को गहनता से सीखकर स्वयं व्यवस्थित ढंग से प्रेक्षण करने का कार्य नहीं करेंगे। यह प्रेक्षण अनुसंधान के विषय क्षेत्र में ही करना होगा अर्थात यह प्रेक्षण करने के लिए मानवविज्ञानी को इस उद्देश्य हेतु कस्बे या बाहर बुलाए गए मूल निवासियों के साक्षात्कार के स्थान पर स्थानीय लोगों के बीच रहना होगा तथा वहाँ के जीवन को देखना होगा जिस प्रकार वह घटित होता है। दुभाषिए के प्रयोग से भी बचना होगा। यह तभी संभव है जब मानवविज्ञानी मूल निवासियों से स्वयं सीधे बातचीत करें। तभी उनकी संस्कृति के बारे में सही तथा प्रामाणिक सूचना प्राप्त हो सकती है।।

लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स में उनकी प्रभावी स्थिति तथा ट्रोब्रियांड में उनके कार्य की ख्याति से मैलिनोवस्की को मानवविज्ञान के विद्यार्थियों को दिए जाने वाले प्रशिक्षण में क्षेत्रीय कार्य को संस्थापक रूप में इसका एक अनिवार्य हिस्सा बनाने के अभियान में सहायता प्राप्त हुई। इसने विषय को एक कठोर विज्ञान, जो विद्वत्तापूर्ण इज़्ज़त का हकदार है, की तरह स्वीकृति मिलने में सहायता की।

के बारे में; तत्पश्चात उसके माता–पिता की पीढ़ी में–उनके पिता, माता, उनके भाइयों, बहनों आदि के बारे में; इसके बाद परदादा–दादी तथा उनके भाइयों, बहनों के बारे में और आगे इसी तरह से पूछा जा सकता है। यह कार्य उतनी पीढ़ियों तक के लिए किया जा सकता है जितना व्यक्ति याद रख सकता है। किसी एक व्यक्ति से प्राप्त सूचना की जाँच अन्य संबंधियों से वही प्रश्न पूछकर की जा सकती है तथा पुष्टि होने के बाद एक विस्तृत वंशवृक्ष बनाया जा सकता है। यह अभ्यास सामाजिक मानवविज्ञानियों को समुदाय की नातेदारी व्यवस्था को समझने में सहायता करता है। साथ ही किसी व्यक्ति के जीवन में विभिन्न संबंधी किस प्रकार की भूमिका निभाते हैं तथा इन संबंधों को कैसे बनाए रखा जाता था, इसका पता चलता है।

एक वंशावली मानवविज्ञानी को समुदाय की संरचना के बारे में जानने में सहायता करती है तथा व्यावहारिक दृष्टि से उन्हें लोगों से मिलने तथा समुदाय की जीवन शैली में घुलने–मिलने में सहायक होती है। इस आधार पर चलकर मानवविज्ञानी लगातार समुदाय की भाषा सीखता है। वह समुदाय के जीवन का प्रेक्षण करता है तथा एक विस्तृत नोट तैयार करता है जिसमें सामुदायिक जीवन के महत्त्वपूर्ण पक्षों का उल्लेख होता है। मानवविज्ञानियों की रुचि विशेष रूप से त्योहारों, धार्मिक या अन्य सामूहिक घटनाओं, आजीविका के साधनों, पारिवारिक संबंधों, बच्चों के पालन–पोषण के साधनों जैसे प्रसंगों में होती है। इन संस्थाओं और व्यवहारों के बारे में जानने के लिए मानवविज्ञानी को उन वस्तुओं के बारे में अंतहीन प्रश्न पूछने पड़ते हैं जिन्हें समुदाय के सदस्य कोई महत्त्व नहीं देते। इस भावना के तहत मानवविज्ञानी को एक बच्चे की तरह होना चाहिए तथा हमेशा क्यों, क्या एवं अन्य प्रश्न पूछते रहना चाहिए। इसके लिए मानवविज्ञानी अधिकांश सूचना हेतु एक या दो व्यक्तियों पर निर्भर होता है। ऐसे व्यक्तियों को 'सूचनादाता' या 'मुख्य सूचनादाता' कहा जाता है। इनके लिए प्रारंभिक दिनों में 'मूल सूचनादाता' शब्द का भी प्रयोग किया जाता था। सूचनादाता मानवविज्ञानी के लिए अध्यापक का काम करते हैं तथा मानवविज्ञानीय अनुसंधान की संपूर्ण प्रक्रिया में अत्यंत महत्त्वपूर्ण कार्यकर्ता होते हैं। इसी तरह से क्षेत्रीय कार्य के दौरान मानवविज्ञानी द्वारा बनाए गए विस्तृत क्षेत्रीय नोट भी समान रूप से महत्त्वपूर्ण होते हैं। इनको प्रतिदिन बिना किसी त्रुटि के लिखा जाना चाहिए

क्रियाकलाप–2

क्षेत्रीय कार्य के कुछ प्रसिद्ध उदाहरण निम्नलिखित हैं–अंडमान निकोबार द्वीपों पर रैडक्लिफ़–ब्राऊन; सूडान में न्यूर पर इवान्स प्रिचार्ड; संयुक्त राज्य अमेरिका में विभिन्न मूल अमेरिकन जनजातियों पर फ्रांज़ बोआस; समोआ पर मार्गरेट मीड, बाली पर क्लीफ़ोर्ड गीड्ज़ आदि।

संसार के नक्शे में इन स्थानों का पता लगाएँ। इन जगहों में क्या समान है? एक मानवविज्ञानी के लिए इन 'अनजानी' संस्कृतियों में रहना कैसा रहा होगा? उन्होंने क्या–क्या कठिनाइयाँ सहन की होंगी?

तथा ये एक दैनिक डायरी का रूप भी ले सकते हैं या इनके साथ एक दैनिक डायरी भी लिखी जा सकती है।

4

समाजशास्त्र में क्षेत्रीय कार्य

समाजशास्त्री जब क्षेत्रीय कार्य करते हैं तो सामान्यतः समान तकनीकों का उपयोग करते हैं। समाजशास्त्रीय क्षेत्रीय कार्य अपनी अंतर्वस्तु में इतना अलग नहीं होता और न ही क्षेत्रीय कार्य के दौरान किए गए कार्य में अलग होता है। परंतु इसके संदर्भ में, जहाँ यह किया जाता है और अनुसंधान के विभिन्न क्षेत्रों या विषयों के वितरण को दिए गए महत्त्व के अनुसार अलग होता है। अतः एक समाजशास्त्री भी एक समुदाय में रहता है और उसके 'अंदर का निवासी' बनने का प्रयास करता है। तथापि एक मानवविज्ञानी के विपरीत, जो क्षेत्रीय कार्य करने के लिए दूर-दराज़ के जनजातीय समुदाय में चला जाता है, समाजशास्त्री अपना क्षेत्रीय कार्य सभी प्रकार के समाजों के समुदायों में करते हैं। साथ ही समाजशास्त्रीय क्षेत्रीय कार्य में 'क्षेत्र में' रहना आवश्यक नहीं है यद्यपि उसे अपना अधिकांश समय समुदाय के सदस्यों के साथ बिताना पड़ता है।

उदाहरण के लिए, अमेरिकी समाजशास्त्री विलियम फोटे वाइटे ने अपना क्षेत्रीय कार्य एक बड़े शहर में इटैलियन-अमेरिकन गंदी बस्ती की गली के सदस्यों के 'गैंग' के बीच किया तथा अपनी प्रसिद्ध पुस्तक *स्ट्रीट कार्नर सोसायटी* लिखी। वह इस क्षेत्र में लगभग साढ़े तीन वर्ष तक 'घूमते-फिरते' रहे तथा अपना समय गैंग

समाजशास्त्र में क्षेत्रीय कार्य – कुछ कठिनाइयाँ

संसार के दूर-दराज़ के इलाके में आदिम जनजाति के बारे में अध्ययन करने वाले मानवविज्ञानी की तुलना में आधुनिक अमेरिकी समुदाय के विद्यार्थी को विभिन्न विशिष्ट समस्याओं का सामना करना पड़ता है। सबसे पहले वह साक्षर लोगों के साथ काम कर रहा होता है। यह निश्चित है कि इनमें से कुछ और शायद अनेक लोग उसकी अनुसंधान रिपोर्ट को पढ़ेंगे। जैसाकि मैंने किया है यदि वह भी उस ज़िले का नाम, जहाँ उसने वास्तव में अध्ययन किया है बदल दे तो अनेक बाहरी व्यक्ति यह पता नहीं लगा पाएँगे कि वास्तव में यह अध्ययन कहाँ पर किया गया है... उस ज़िले के व्यक्ति वास्तव में जानते हैं कि यह उनके बारे में है तथा नाम बदलने के बावजूद भी उनसे व्यक्तियों की पहचान छिपाई नहीं जा सकती। वे अनुसंधानकर्ता को जानते है तथा वह किन लोगों के साथ जुड़ा हुआ था यह भी जानते हैं तथा यह भी पता है कि विभिन्न समूहों में कौन-कौन व्यक्ति थे और इसमें त्रुटि की संभावना बहुत कम है।

ऐसी स्थिति में अनुसंधानकर्ता का उत्तरदायित्व बहुत बढ़ जाता है। वह अवश्य चाहेगा कि उसकी पुस्तक से उस ज़िले के लोगों को कुछ सहायता प्राप्त हो। कम से कम वह अवश्य चाहेगा कि इससे किसी भी प्रकार की हानि की न्यूनतम आशंका हो। वह इस संभावना को पूर्ण रूप से जानता है कि ऐसा होने से इस पुस्तक के प्रकाशन से कुछ व्यक्तियों को कठिनाइयाँ हो सकती हैं।

– *विलियम फोटे वाइटे, स्ट्रीट कार्नर सोसायटी,* पेज 342

या समूह के सदस्यों के बीच बिताया, जिनमें से अधिकांश अत्यंत गरीब बेरोज़गार युवा थे, यह प्रवासियों के समुदाय की अमेरिका में जन्मी पहली पीढ़ी थी। हालाँकि समाजशास्त्रीय क्षेत्रीय कार्य का यह उदारहण मानवविज्ञानी क्षेत्रीय कार्य के काफ़ी निकट है फिर भी इसमें महत्त्वपूर्ण अंतर है। (पिछले पृष्ठ के बॉक्स को देखें)। समाजशास्त्रीय क्षेत्रीय कार्य को सिर्फ़ इस प्रकार होने की आवश्यकता नहीं हैं–यह अलग रूप में भी किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, जैसाकि दूसरे अमेरिकन समाजशास्त्री मिशेल बुरावो के कार्य में किया गया है। उन्होनें शिकागो कारखाने में अनेक महीनों तक कारीगर के रूप में कार्य किया तथा कामगारों के दृष्टिकोण से कार्य के अनुभव के बारे में लिखा।

भारतीय समाजशास्त्र में जिस तरह ग्रामीण अध्ययनों में क्षेत्रीय कार्य पद्धतियों का प्रयोग किया गया, वह एक महत्त्वपूर्ण तरीका है। सन् 1950 में अनेक भारतीय तथा विदेशी समाजशास्त्री तथा मानवविज्ञानी गाँवों के जीवन तथा समाज पर कार्य करने लगे। गाँवों ने जनजातीय समुदायों, जिनका अध्ययन आरंभिक मानवविज्ञानियों द्वारा किया गया था की भूमिका निभाई। यह भी एक 'सीमित समुदाय' था तथा इतना छोटा था कि एक अकेले व्यक्ति द्वारा इसका अध्ययन किया जा सकता था। अर्थात समाजशास्त्री गाँव में लगभग प्रत्येक को जान सकता था तथा वहाँ के जीवन का पता लगा सकता था। तथापि मानवविज्ञान का सरोकार अधिकतर आदिम समुदायों से होने के कारण उपनिवेशवादी भारत में राष्ट्रवादियों में यह लोकप्रिय नहीं था। अनेक शिक्षित भारतीयों का मानना था कि मानवविज्ञान जैसे विषयों में औपनिवेशिक पूर्वाग्रह शामिल हैं क्योंकि वे औपनिवेशिक समाजों के विकासात्मक या सकारात्मक पहलुओं के स्थान पर उनके गैर-आधुनिक पक्षों को उजागर करते थे। इसलिए समाजशास्त्री के लिए केवल जनजातियों का अध्ययन करने के स्थान पर

क्रियाकलाप-3

यदि आप गाँव में रहते हैं, तो अपने गाँव के बारे में ऐसे व्यक्ति को बताने की कोशिश करें जो वहाँ कभी न गया हो। गाँव में आपके जीवन के वे कौन से मुख्य लक्षण होंगे जिन्हें आप महत्त्व देना चाहेंगे? आपने फ़िल्मों या टेलीविजन पर दिखाए गए गाँवों को भी अवश्य देखा होगा। आप इन गाँवों के बारे में क्या सोचते हैं तथा ये आपके गाँव से किस प्रकार भिन्न हैं? फ़िल्म या टेलीविजन पर दिखाए गए शहरों के बारे में भी सोचिए–क्या आप इनमें रहना पसंद करेंगे? अपने उत्तर के पक्ष में कारण बताएँ।

यदि आप किसी कस्बे या शहर में रहते हैं, तो अपने आस-पड़ोस के बारे में ऐसे व्यक्ति को बताएँ जो कभी वहाँ नहीं गया हो। आपके पास-पड़ोस में आपके जीवन की मुख्य विशेषताएँ कौन सी हैं जिन्हें आप महत्त्व देना चाहेंगे? फ़िल्म या टेलीविजन में दिखाए गए शहरों के पड़ोस से आपका पड़ोस किस प्रकार से भिन्न (या सदृश्य) है? आपने फ़िल्म या टेलीविजन पर दिखाए गए गाँव भी अवश्य देखे होंगे–क्या आप इनमें रहना पसंद करेंगे? अपने उत्तर के पक्ष में कारण बताएँ।

गाँवों तथा गाँववालों का अध्ययन करना ज़्यादा स्वीकार्य तथा महत्त्वपूर्ण था। आरंभिक मानवविज्ञान तथा उपनिवेशवाद के बीच संबंधों पर भी प्रश्न पूछे जाने लगे थे। वास्तव में मैलिनोवस्की, इवान्स प्रिचार्ड तथा अनेक अन्य व्यक्तियों द्वारा किए गए क्लासिक क्षेत्रीय कार्य इस तथ्य के कारण संभव हो पाए थे कि वे लोग एवं स्थान जहाँ क्षेत्रीय कार्य किया गया था,

गाँवों का अध्ययन करने की विभिन्न शैलियाँ

सन् 1950 तथा 1960 के दौरान गाँवों का अध्ययन करना भारतीय समाजशास्त्र का मुख्य पेशा बन गया था। परंतु इससे काफ़ी समय पहले एक मिशनरी दंपति विलियम तथा चारलोटे वाइज़र ने, जो उत्तर प्रदेश के एक गाँव में पाँच वर्ष तक रहे, एक प्रसिद्ध ग्रामीण अध्ययन *बिहाईंड मॅड वॉल्स* लिखा था। वाइज़र की यह पुस्तक उनके मिशनरी कार्य का एक उप-उत्पाद थी। हालाँकि विलियम वाइज़र एक समाजशास्त्री के रूप में प्रशिक्षण प्राप्त थे तथा इससे पहले भी जजमानी व्यवस्था पर एक पुस्तक लिख चुके थे।

सन् 1950 में किए गए ग्रामीण अध्ययन विभिन्न संदर्भ में जन्मे थे तथा अनेक विभिन्न तरीकों से किए गए थे। क्लासिकी सामाजिक मानवविज्ञानी शैली मुख्य थी तथा इसके साथ 'जनजाति' या 'सीमित समुदाय का स्थान गाँव ने ले लिया था। इस तरह के क्षेत्रीय कार्य का सबसे प्रसिद्ध उदाहरण शायद एम. एन. श्रीवास्तव की प्रसिद्ध पुस्तक *रिमेम्बरड विलेज* में दिया गया है। श्रीनिवास ने मैसूर के निकट एक गाँव में एक वर्ष बिताया जिसे उन्होंने रामपुरा नाम दिया। इस पुस्तक का शीर्षक यह बताता है कि श्रीनिवास द्वारा तैयार किए गए क्षेत्रीय नोट्स आग में जल गए तथा उन्होंने अपनी याद्दाश्त के आधार पर गाँव के बारे में लिखना पड़ा था।

एक अन्य प्रसिद्ध ग्रामीण अध्ययन सन् 1950 में एस.सी. दुबे द्वारा लिखित *इंडियन विलेज* था। उस्मानिया विश्वविद्यालय में एवं सामाजिक मानवविज्ञानी के रूप में दुबे एक बहु-विषयक दल के सदस्य थे, जिसमें कृषि विज्ञान, अर्थशास्त्र, पशु विज्ञान तथा औषध विज्ञान के विभाग शमिल थे। इन्होंने सिकंदराबाद के निकट समीरपेट नामक एक गाँव का अध्ययन किया। इस बड़ी सामूहिक परियोजना का उद्देश्य सिर्फ़ गाँव का अध्ययन करना ही नहीं बल्कि उसका विकास करना भी था। दरअसल इसका उद्देश्य समीरपेट को एक ऐसी प्रयोगशाला बनाना था जहाँ ग्रामीण विकास कार्यक्रम बनाने हेतु प्रयोग किए जा सकते थे।

ग्रामीण अध्ययन की एक अन्य शैली सन् 1950 में किए गए *कोरनेल विलेज स्टडी प्रोजेक्ट* में दिखाई देती है। कोरनेल विश्वविद्यालय द्वारा प्रारंभ की गई परियोजना में अमेरिकन मानवविज्ञानियों, मनोवैज्ञानिकों तथा भाषाविदों का एक समूह था जिन्होंने भारत के पूर्वी उत्तर प्रदेश के अनेक गाँवों का अध्ययन किया। ग्रामीण समाज तथा संस्कृति का बहु-विषयक अध्ययन करने की यह अति महत्त्वपूर्ण शैक्षिक परियोजना थी। इस परियोजना में कुछ भारतीय विद्वान भी शामिल थे, जिन्होंने कई अमेरिकनों की प्रशिक्षण में सहायता की तथा जो बाद में भारतीय समाज के प्रसिद्ध विद्वान बने।

औपनिवेशिक साम्राज्यों का हिस्सा थे तथा यह उन देशों द्वारा शासित थे जहाँ से पश्चिमी मानवविज्ञानी आए थे।

तथापि पद्धतिशास्त्रीय कारणों की बजाए गाँव पर किए गए अध्ययन इसलिए अधिक महत्त्वपूर्ण थे क्योंकि उन्होंने भारतीय समाजशास्त्र को एक ऐसा विषय उपलब्ध कराया जो नए स्वतंत्र भारत में अत्यंत रुचिकर था। सरकार की रुचि विकासशील ग्रामीण भारत में थी। राष्ट्रीय आंदोलन, विशेष रूप से महात्मा गांधी 'ग्राम उत्थान' कार्यक्रमों में सक्रिय रूप से भाग ले रहे थे। यहाँ तक कि शहरी शिक्षित भारतीय भी ग्रामीण जीवन में अत्यधिक रुचि ले रहे थे क्योंकि इनमें से अधिकतर के कुछ पारिवारिक तथा वर्तमान ऐतिहासिक संबंध गाँवों से थे। इससे बढ़कर गाँव ऐसी जगह थी जहाँ अधिकांश भारतीय रहते थे (और अभी भी रहते हैं)। इन्हीं कारणों से गाँवों के अध्ययन भारतीय समाजशास्त्र का अत्यंत महत्त्वपूर्ण हिस्सा बन गए थे तथा ग्रामीण समाज का अध्ययन करने के लिए क्षेत्रीय कार्य पद्धतियाँ अत्यंत अनुकूल थीं।

सहभागी प्रेक्षण की कुछ सीमाएँ

आप पहले ही देख चुके हैं कि सहभागी प्रेक्षण क्या कर सकता है। इसकी मुख्य ताकत यह है कि यह 'अंदर के' व्यक्ति के दृष्टिकोण से जीवन की महत्त्वपूर्ण तथा विस्तृत तसवीर उपलब्ध कराता है। यह आंतरिक दृष्टिकोण ही है जो क्षेत्रीय कार्य करने के लिए दिए समय तथा प्रयास के अत्यधिक निवेश के बदले में प्राप्त होता है। अधिकांश अन्य अनुसंधान पद्धतियाँ काफ़ी लंबे समय के उपरांत 'क्षेत्र' का विस्तृत ज्ञान होने का दावा नहीं कर सकतीं, क्योंकि वे सामान्यतः संक्षिप्त तथा जल्दी में दिए गए क्षेत्रीय दौरे पर आधारित होती हैं। क्षेत्रीय कार्य में प्रारंभिक प्रभावों में सुधार करने की गुंजाइश होती है जोकि प्रायः त्रुटिपूर्ण या पूर्वाग्रहित हो सकते हैं। यह अनुसंधानकर्ता को रुचि के विषय में हुए परिवर्तनों को जानने तथा विभिन्न परिस्थितियों या संदर्भों के प्रभाव जानने में भी सहायता करता है। उदाहरणार्थ; किसी अच्छी फसल के साल में और बुरी फसल के साल में सामाजिक संरचना या संस्कृति के विभिन्न पक्षों को जाना जा सकता है, रोज़गार या बेरोज़गार व्यक्तियों का व्यवहार अलग-अलग हो सकता है आदि। क्योंकि सहभागी प्रेक्षक क्षेत्र में 'पूरा समय' व्यतीत करता है, इसलिए उन अनेक त्रुटियों या पूर्वाग्रहों से बच सकता है जिनसे सर्वेक्षणों, प्रश्नावलियों या अल्पकालीन प्रेक्षणों के द्वारा नहीं बचा जा सकता।

परंतु सभी अनुसंधान पद्धतियों की तरह क्षेत्रीय कार्य की भी कुछ कमज़ोरियाँ हैं अन्यथा सभी समाज-विज्ञानी इसी एक पद्धति का प्रयोग कर रहे होते।

अपनी प्रकृति के कारण क्षेत्रीय कार्य में लंबे समय तक चलने वाला तथा किसी एक अकेले अनुसंधानकर्ता द्वारा किया जाने वाला गहन अनुसंधान निहित होता है। अतः यह विश्व के एक छोटे से भाग को ही अनुसंधान में शामिल कर पाता है। सामान्यतया यह एक अकेला गाँव या छोटा समुदाय होता है। हम कभी भी निश्चित नहीं कर सकते कि मानवविज्ञानी या

समाजशास्त्री द्वारा क्षेत्रीय कार्य के दौरान किए गए प्रेक्षण बड़े समुदाय (अर्थात अन्य गाँवों, क्षेत्रों या देश में) में भी अधिक रूप में समान होंगे या फिर ऐसा अपवाद स्वरूप होता है। शायद यह क्षेत्रीय कार्य की सबसे बड़ी कमज़ोरी है।

क्षेत्रीय कार्य पद्धति की एक अन्य महत्त्वपूर्ण सीमा यह होती है कि हमें यह पता नहीं होता कि यह मानवविज्ञानी की आवाज़ है या फिर उन लोगों की जिनके बारे में अध्ययन किया गया है। वास्तव में इसका उद्देश्य उन लोगों के मतों का ही प्रतिनिधित्व माना जाता है जिनका अध्ययन किया गया है, परंतु इसकी सदैव संभावना रहती है कि मानवविज्ञानी द्वारा चेतन या अवचेतन मन से उसके नोट्स में लिखी गई किन बातों का चयन किया गया है तथा वह पाठकों के सामने इसे अपनी पुस्तकों या निबंधों में कैसे प्रस्तुत करता है। क्योंकि हमारे पास मानवविज्ञानी के कथन के अतिरिक्त कोई अन्य रूप उपलब्ध नहीं होता, अत: इसमें सदैव त्रुटि या पूर्वाग्रह की संभावना बनी रहती है। यद्यपि यह जोखिम अधिकांश अनुसंधान पद्धतियों में विद्यमान रहता है।

सामान्यतया क्षेत्रीय कार्य पद्धतियों की आलोचना एक पक्षीय संबंधों के कारण भी की जाती है जिन पर वे आधारित होती हैं। मानवविज्ञानी समाजशास्त्री प्रश्न पूछते हैं और उत्तर प्रस्तुत करते हैं तथा 'लोगों के लिए' बोलते हैं। इसके विरोध में कुछ विद्वानों ने अधिक 'संवादीय' प्रारूप बनाने का सुझाव दिया है–अर्थात क्षेत्रीय कार्य के परिणामों के प्रस्तुतीकरण के तरीके, जिनमें उत्तरदाता तथा लोग प्रत्यक्ष रूप से शामिल हो सकते हैं। ठोस शब्दों में, इसमें विद्वान व्यक्ति के कार्य का समुदाय की भाषा में अनुवाद तथा इस पर उनकी राय और उनके उत्तरों को रिकार्ड करना शामिल है। ज्यों–ज्यों अनुसंधानकर्ता तथा जिन व्यक्तियों पर अनुसंधान किया जाता है, उनके बीच की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक दूरी या अंतर कम होता है, त्यों–त्यों इस बात की संभावना बढ़ती जाती है कि विद्वानों के कथनों पर लोगों द्वारा प्रश्न किए जाएँगे, इन्हें मान लिया जाएगा तथा लोगों द्वारा इन्हें स्वयं ठीक कर लिया जाएगा। इससे निश्चित रूप में समाजशास्त्रीय अनुसंधान ज़्यादा विवादास्पद तथा अधिक कठिन हो जाएगा परंतु लंबे समय के लिए यह एक अच्छी बात ही हो सकती है क्योंकि इससे समाजिक विज्ञान को आगे ले जाने में तथा इसे और अधिक जनतंत्रीय बनाने में सहायता मिलेगी अतएव अधिक से अधिक लोगों को 'ज्ञान' की रचना करने तथा इसमें आलोचात्मक दृष्टि से भाग लेने में सहायता मिलेगी।

सर्वेक्षण

शायद सर्वेक्षण क्षेत्रीय कार्य के लिए अब तक ज्ञात सबसे अच्छी समाजशास्त्रीय पद्धति है जोकि अब आधुनिक सार्वजनिक जीवन का इस तरह से एक हिस्सा बन गई है कि यह एक सामान्य बात हो गई है। आज इसका विश्वभर में सभी संदर्भों में प्रयोग किया जा रहा है तथा ये संदर्भ समाजशास्त्र के सरोकारों से बाहर चले गए हैं। भारत में भी हमने देखा है कि सर्वेक्षणों का प्रयोग विभिन्न प्रकार के गैर–शैक्षिक उद्देश्यों के लिए किया जा रहा है जिनमें चुनाव परिणामों का पूर्वानुमान

लगाना, उत्पादों को बेचने के लिए विपणन नीतियाँ बनाना तथा विषयों की व्यापक विभिन्नताओं के बारे में लोकप्रियता का पता लगाना शामिल है।

जैसाकि स्वयं शब्द से स्पष्ट है, सर्वेक्षण में संपूर्ण तथ्यों का पता लगाने का प्रयास किया जाता है। यह किसी विषय पर सावधानीपूर्वक चयन किए गए लोगों के प्रतिनिधि समुच्चय से प्राप्त सूचना का व्यापक या विस्तृत दृष्टिकोण होता है। ऐसे लोगों को प्राय: 'उत्तरदाता' कहा जाता है। ये अनुसंधानकर्ता द्वारा उनसे पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देते हैं। सर्वेक्षण अनुसंधान सामान्यतया विस्तृत दल द्वारा किया जाता है जिसमें अध्ययन की योजना बनाने वाले तथा रूपरेखा तैयार करने वाले (अनुसंधानकर्ता) तथा उनके सहयोगी और सहायक (जिन्हें 'अन्वेषक' या 'अनुसंधान सहायक' कहा जाता है) शामिल होते हैं। सर्वेक्षण के प्रश्न विभिन्न प्रकार से पूछे जा सकते हैं तथा इनके उत्तर भी विभिन्न प्रकार से दिए जा सकते हैं। अकसर अन्वेषक द्वारा व्यक्तिगत दौरे के दौरान इन्हें मौखिक रूप में पूछा जाता है तथा कभी-कभी दूरभाष द्वारा पूछा जाता है। अन्वेषक द्वारा लाई गई या डाक द्वारा प्राप्त 'प्रश्नावलियों' में भी उत्तर लिखे जा सकते हैं। कंप्यूटरों तथा दूरसंचार तकनीक के बढ़ते

जनगणना तथा राष्ट्रीय प्रतिदर्श (निदर्शन) सर्वेक्षण संगठन

प्रत्येक दस वर्ष में किया जाने वाला भारत का जनसंख्या सर्वेक्षण विश्व में इस प्रकार का सबसे बड़ा सर्वेक्षण है। (हमसे ज़्यादा जनसंख्या वाला देश है चीन जहाँ ऐसी नियमित जनगणना नहीं होती)। इसमें लाखों अन्वेषक तथा अत्यधिक संख्या में संगठनों के समावेश के अतिरिक्त भारत सरकार द्वारा बड़ी धनराशि व्यय की जाती है। यद्यपि बदले में हमें भारत में रहने वाले प्रत्येक घर तथा भारत में रहने वाले एक अरब से ज़्यादा लोगों में से प्रत्येक व्यक्ति जो इसमें शामिल होते हैं का वास्तविक सर्वेक्षण प्राप्त होता है। स्पष्ट रूप से ऐसे विस्तृत सर्वेक्षण बार-बार नहीं किए जा सकते। दरअसल अनेक विकसित देश अब पूर्ण जनगणना नहीं कराते। इसके स्थान पर वे अपनी जनसंख्या संबंधी आँकड़ों के लिए प्रतिदर्श सर्वेक्षण पर आश्रित हैं। क्योंकि ऐसे सर्वेक्षण काफ़ी हद तक सही पाए गए हैं। भारत में राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (एन.एस.एस.ओ.) गरीबी तथा बेरोज़गारी के स्तर का (तथा अन्य विषयों) हर वर्ष प्रतिदर्श सर्वेक्षण करता है। प्रत्येक पाँच वर्ष में यह एक विस्तृत सर्वेक्षण करता है जिसमें लगभग 1.2 लाख घर शामिल होते हैं जिससे पूरे भारत में 6 लाख से ज़्यादा व्यक्ति इसमें शामिल होते हैं। वास्तव में इसे विस्तृत प्रतिदर्श माना जाता है तथा एन.एस.एस.ओ. द्वारा किए गए सर्वेक्षण संसार में नियमित रूप से किए गए सबसे बड़े सर्वेक्षणों में गिने जाते हैं। क्योंकि भारत की कुल आबादी 100 करोड़ से अधिक है अत: आप देख सकते हैं कि एन.एस.एस.ओ. के पंचवर्षीय सर्वेक्षणों में शामिल प्रतिदर्श भारत की जनसंख्या के लगभग 0.06 प्रतिशत मात्र, एक प्रतिशत के बीसवें भाग से थोड़ा ज़्यादा है। चूँकि इसका चयन वैज्ञानिक तौर पर संपूर्ण जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करने के लिए होता है, इतने छोटे अनुपात पर आधारित होने के बावजूद एन.एस.एस.ओ. प्रतिदर्श जनसंख्या की विशेषताओं का अनुमान कर सकता है।

प्रयोग के फलस्वरूप आज इलैक्ट्रॉनिक रूप में सर्वेक्षण करना भी संभव हो गया है। इस प्रारूप में उत्तरदाता प्रश्नों को ई–मेल, इंटरनेट या इसी प्रकार के इलैक्ट्रॉनिक माध्यमों द्वारा प्राप्त करता है तथा इसके द्वारा ही उत्तर देता है।

सामाजिक वैज्ञानिक पद्धति के रूप में सर्वेक्षण का मुख्य लाभ यह है कि इसके द्वारा जनसंख्या के केवल छोटे से भाग पर सर्वेक्षण करके इसके परिणामों को बड़ी जनसंख्या पर लागू किया जा सकता है। अत: सीमित समय, प्रयास तथा धन के निवेश द्वारा सर्वेक्षण बड़ी जनसंख्याओं के अध्ययन को संभव बनाता है। यही कारण है कि समाजिक विज्ञानों तथा अन्य क्षेत्रों में यह अत्यधिक लोकप्रिय पद्धति है।

सांख्यिकी की शाखा, जिसे प्रतिदर्श सिद्धांत कहा जाता है, की खोजों का लाभ उठाते हुए प्रतिदर्श सर्वेक्षण चयन के मामले में सावधान होने के बावजूद परिणामों का सामान्यीकरण कर सकता है। इस 'सरल उपाय' का महत्त्वपूर्ण कारण प्रतिदर्श का प्रतिनिधित्व है। हम एक दी गई जनसंख्या में से प्रतिनिधि प्रतिदर्श का चयन कैसे करेंगे? व्यापक रूप में प्रतिदर्श की चयन प्रक्रिया दो मुख्य सिद्धांतों पर आधारित है।

पहला सिद्धांत यह है कि जनसंख्या में सभी महत्त्वपूर्ण उपसमूहों को पहचाना जाए तथा प्रतिदर्श में उन्हें प्रतिनिधित्व दिया जाए। अधिकतर बड़ी जनसंख्याएँ एक समान नहीं होती, उनमें भी स्पष्ट उप–श्रेणियाँ होती हैं। इसे स्तरीकरण कहा जाता है। (नोट करें कि स्तरीकरण की यह सांख्यिकीय धारणा है जो स्तरीकरण की समाजशास्त्रीय संकल्पना से अलग है जिसका आपने अध्याय 4 में अध्ययन किया है)। उदाहरणार्थ; जब भारत की जनसंख्या के बारे में बात करते हैं तो हमें इस बात को ध्यान रखना होगा कि यह जनसंख्या शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में बँटी हुई है जोकि एक दूसरे से काफ़ी हद तक अलग है। किसी भी एक राज्य की ग्रामीण जनसंख्या पर विचार करते समय हमें इस तथ्य का ध्यान रखना होगा कि यह जनसंख्या विभिन्न आकार वाले गाँवों में रहती है। इसी तरह से किसी एक गाँव की जनसंख्या भी वर्ग, जाति, लिंग, आयु, धर्म या अन्य मानदंडों के आधार पर स्तरीकृत हो सकती है। संक्षिप्त में स्तरीकरण की धारणा हमें बताती है कि प्रतिदर्श का प्रतिनिधित्व दी गई जनसंख्या के सभी संबद्ध स्तरों की विशेषताओं को दर्शाने की सक्षमता पर निर्भर है। किस प्रकार के प्रतिदर्शों को प्रासंगिक माना जाए यह अनुसंधान के अध्ययन के विशिष्ट उद्देश्यों पर निर्भर है। उदाहरणार्थ; धर्म के प्रति मनोवृत्तियों के बारे में अध्ययन करते समय यह महत्त्वपूर्ण हो सकता है कि सभी धर्मों के सदस्यों को शामिल किया जाए। मज़दूर संघों के प्रति मनोवृत्तियों पर अनुसंधान करते समय कामगारों, प्रबंधकों तथा उद्योगपतियों को शामिल करना चाहिए।

प्रतिदर्श चयन का दूसरा सिद्धांत है वास्तविक इकाई, अर्थात व्यक्ति या गाँव या घर का चयन पूर्णतया अवसर आधारित होना चाहिए। इसे यादृच्छीकरण कहा जाता है जोकि स्वयं संभाविता की संकल्पना पर आधारित है। आपने अपने गणित पाठ्यक्रम में संभाविता के बारे में पढ़ा होगा। संभाविता का आशय घटना के घटित होने

के अवसरों (या विषमताओं) से है। उदाहरण के लिए, जब हम सिक्का उछालते हैं तो यह या तो चित की ओर पड़ता है या फिर पट की ओर। सामान्य सिक्कों में चित या पट आने का अवसर या संभाविता लगभग एक समान है अर्थात प्रत्येक का 50 प्रतिशत होता है। वास्तव में जब आप सिक्का उछालते हैं तो दोनों में से कौन सी घटना होती है अर्थात चित आता है या पट, यह पूरी तरह से अवसर पर निर्भर करता है और किसी बात पर नहीं। इस प्रकार के अवसरों को यादृच्छिक अवसर कहा जाता है।

हम एक प्रतिदर्श को चुनने में समान विचार का उपयोग करते हैं। हम सुनिश्चित करने का प्रयास करते हैं कि प्रतिदर्श में चयन किए गए व्यक्ति या घर या गाँव पूर्णतः अवसर द्वारा चयनित हों, किसी अन्य तरह से नहीं। अतः प्रतिदर्श में चयन होना किस्मत की बात है, जैसे कि लॉटरी जीतना। यह तभी हो सकता है जब यह सच हो कि प्रतिदर्श एक प्रतिनिधित्व प्रतिदर्श होगा। यदि कोई सर्वेक्षण दल अपने प्रतिदर्श में केवल उन्हीं गाँवों का चयन करता है जो मुख्य सड़क के निकट हों तो यह प्रतिदर्श यादृच्छिक या संयोगवश न होकर पूर्वाग्रहित होंगे। इसी तरह से यदि हम अधिकतर मध्यमवर्ग के घरों का या अपने जानकार घरों का चयन करते हैं तो प्रतिदर्श पुनः पूर्वाग्रहित होंगे। मुख्य बिंदु यह है कि जनसंख्या से संबंधित स्तरों का पता लगाने के बाद प्रतिदर्श घरों या उत्तरदाताओं का वास्तविक चयन पूर्णतया संयोग के आधार पर होना चाहिए। इसे विभिन्न तरीकों से सुनिश्चित किया जा सकता है। इसे प्राप्त करने के लिए विभिन्न तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। इनमें सामान्य रूप से लॉटरी निकालना, पाँसे फेंकना, इस उद्देश्य हेतु विशेष रूप से बनाई गई प्रतिदर्श नंबर प्लेटों का प्रयोग तथा हाल ही में गणकों या संगणकों द्वारा बनाई गई प्रतिदर्श संख्याएँ शामिल हैं।

एक प्रतिदर्श सर्वेक्षण का चयन कैसे किया जाता है इसे जानने के लिए आइए हम एक ठोस उदाहरण लें। मान लीजिए हम उस परिकल्पना की जाँच करना चाहते हैं जिसमें यह कहा गया है कि छोटे, आपस में अधिक घनिष्ठता वाले समुदाय बड़े, अधिक अवैयिक्तक समुदायों की तुलना में ज़्यादा अंतःसामुदायिक समन्वय की उत्पत्ति करते हैं। सरलता से समझने के लिए आइए मान लेते हैं कि हम भारत के किसी एक राज्य के ग्रामीण क्षेत्र में रुचि रखते हैं। प्रतिदर्श चयन करने की सरलतम संभावित प्रक्रिया राज्य के सभी गाँवों की उनकी जनसंख्या के साथ सूची बनाने से प्रारंभ होगी (यह सूची जनगणना आँकड़ों से भी प्राप्त की जा सकती है)। तत्पश्चात् हमें छोटे तथा बड़े गाँवों के मानदंडों को परिभाषित करना होगा। गाँवों की मूल सूची से अब हमें सभी मध्यम गाँवों अर्थात जो न तो छोटे हैं और न ही बड़े हैं, उनको हटाना होगा। अब हमारे पास गाँव के आकार के अनुसार एक संशोधित सूची है। हमारे अनुसंधान संबंधी प्रश्नों के अनुसार हम प्रत्येक स्तर अर्थात छोटे तथा बड़े गाँवों को समान महत्त्व देना चाहते हैं, अतः हमने प्रत्येक स्तर से 10 गाँवों को चुनने का निर्णय लिया। इसके लिए हम छोटे तथा बड़े गाँवों की सूची

को क्रम प्रदान करेंगे तथा प्रत्येक सूची से लॉटरी द्वारा दस–दस गाँवों का चयन यादृच्छिक विधि द्वारा करेंगे। अब हमारे पास राज्य के 10 छोटे तथा 10 बड़े गाँवों वाले प्रतिदर्श हैं तथा हम इन गाँवों का अध्ययन यह जानने के लिए प्रारंभ कर सकते हैं कि हमारी प्रारंभिक परिकल्पना सही थी या नहीं।

वास्तव में यह एक अत्यधिक सरल रूपरेखा है। वास्तविक अनुसंधान अध्ययनों में सामान्यतया अधिक जटिल रूपरेखा होती है जिसमें प्रतिदर्श चयन प्रक्रिया अनेक चरणों में विभाजित होती है तथा इसमें अनेक स्तर शमिल होते है। परंतु मूल सिद्धांत समान रहता है–एक लघु प्रतिदर्श का सावधानीपूर्वक चयन किया जाए ताकि यह पूरी जनसंख्या का प्रतिनिधित्व कर सके। तत्पश्चात प्रतिदर्श का अध्ययन किया जाता है और इससे प्राप्त परिणामों का सामान्यीकरण कर इसे संपूर्ण जनसंख्या पर लागू किया जाता है। वैज्ञानिक ढंग से चयन किए गए प्रतिदर्श की सांख्यिकीय विशेषताएँ सुनिश्चित करती हैं कि प्रतिदर्श की

क्रियाकलाप–4

अपने समूह में उन सर्वेक्षणों के बारे में चर्चा कीजिए जिनके बारे में आप जानते हैं। ये चुनाव सर्वेक्षण, या समाचार पत्रों या टेलीविजन माध्यमों द्वारा किए गए अन्य लघु सर्वेक्षण भी हो सकते हैं। जब सर्वेक्षण के परिणाम घोषित किए गए तो क्या सीमांत त्रुटि के बारे में भी बताया गया था? क्या यह बताया गया था कि सर्वेक्षण का आकार क्या है तथा इनका चयन कैसे किया गया था? जहाँ अनुसंधान पद्धतियों के ये पक्ष साफ़ तौर पर न दिए गए हों वहाँ आपको इन सर्वेक्षणों के बारे में सवाल करना चाहिए क्योंकि इनके बिना निष्कर्षों का मूल्यांकन करना संभव नहीं है। सर्वेक्षण पद्धतियों का प्रचलित माध्यमों में प्रायः दुरुपयोग किया जाता है। पूर्वाग्रहित तथा अप्रतिनिधि प्रतिदर्श के आधार पर बड़े–बड़े दावे किए जाते हैं। आप इस परिप्रेक्ष्य से उन सर्वेक्षणों के बारे में, जिनके बारे में आप जानते हैं, चर्चा कर सकते हैं।

क्रियाकलाप–5

यदि आपके सर्वेक्षण का उद्देश्य निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर देना हो तो आप अपने स्कूल में सभी विद्यार्थियों में से प्रतिनिधि प्रतिदर्श का चयन करने के लिए क्या करेंगे–

(क) जिन विद्यार्थियों के अनेक भाई तथा बहन हैं, वह उन विद्यार्थियों की तुलना में जिनका एक भाई या बहन (या कोई भी नहीं) है, पढ़ाई में अच्छे हैं या बुरे?

(ख) प्राथमिक विद्यालय (कक्षा 1 से 5), माध्यमिक विद्यालय (कक्षा 6 से 8), उच्च माध्यमिक विद्यालय (9 से 10) तथा उच्चतर माध्यमिक विद्यालय (कक्षा 11 से 12) में अंतराल के समय में विद्यार्थियों का सबसे लोकप्रिय क्रियाकलाप कौन सा है?

(ग) क्या किसी विद्यार्थी का प्रिय विषय उसके प्रिय शिक्षक द्वारा पढ़ाया जाने वाला विषय है? क्या लड़के तथा लड़कियों में इस संबंध में कोई अंतर है?

(नोट : इन प्रत्येक प्रश्नों के लिए विभिन्न प्रतिदर्श रूपरेखा बनाएँ)।

समग्र सांख्यिकी–लिंग अनुपात में तीव्र गिरावट

आपने अध्याय 3 में लिंगानुपात में तीव्र गिरावट के बारे में पढ़ा है। हाल ही के दशकों में लड़कों की संख्या की तुलना में बहुत कम लड़कियाँ जन्म ले रही हैं तथा पंजाब, हरियाणा, दिल्ली तथा हिमाचल प्रदेश जैसे राज्यों में यह समस्या चिंताजनक स्तर पर पहुँच गई है।

लिंगानुपात (तरुण या बाल) 0–6 वर्ष की आयु में 1000 लड़कों की तुलना में लड़कियों की संख्या व्यक्त करता है। यह अनुपात संपूर्ण भारत में या अनेक राज्यों, दोनों में दशकों के दौरान तीव्रता से कम हो रहा है। यहाँ पर भारत के तथा चयन किए गए राज्यों के 1991 तथा 2001 की जनगणना में दिए गए औसत तरुण लिंगानुपात को दिया गया है।

0–6 आयु समूह में प्रति 1000 लड़कों की तुलना में लड़कियों की संख्या सन् 2011

	1991	2001	2011
भारत	945	927	914
पंजाब	875	798	846
हरियाणा	879	819	830
दिल्ली	915	868	866
गुजरात	928	883	890
हिमाचल प्रदेश	951	896	906

* स्रोत - https://updateox.com/india/child-sex-ratio-in-india-state-wise-data/

बाल लिंगानुपात एक ऐसा समग्र (या समष्टि) चर है जो तभी दिखाई देता है जब आप बड़ी जनसंख्याओं की सांख्यिकी को मिलाते (इकट्ठा रखते) हैं। हम एक परिवार को देखकर नहीं बता सकते कि समस्या इतनी विकट है। किसी भी एक परिवार में लड़के तथा लड़कियों के सापेक्षित अनुपात की क्षतिपूर्ति उन परिवारों के विभिन्न अनुपात से सदैव की जा सकती है जिन्हें हमने कभी नहीं देखा है। जनगणना जैसी पद्धतियों के प्रयोग द्वारा या बड़े पैमाने पर सर्वेक्षण करके ही पूरे समुदाय के कुल अनुपात की गणना की जा सकती है तथा समस्या का पता लगाया जा सकता है। क्या आप ऐसे अन्य सामाजिक मुद्दों के बारे में सोच सकते हैं जिनका सर्वेक्षणों या जनगणनाओं द्वारा ही अध्ययन

विशेषताएँ उस जनसंख्या की विशेषताओं से घनिष्ठ रूप से मिलती हों जिससे इसे लिया गया है। इनमें सूक्ष्म अंतर हो सकते हैं परंतु ऐसे विचलन की संभावना को निर्धारित किया जा सकता है। इसे सीमांत त्रुटि या प्रतिदर्श की त्रुटि कहा जाता है। यह अनुसंधानकर्ताओं की गलती से नहीं, अपितु इस बात से उत्पन्न होती है कि हम बहुत बड़ी जनसंख्या के लिए छोटे प्रतिदर्श प्रयोग कर रहे हैं। प्रतिदर्श सर्वेक्षणों के परिणामों की सूचना देते समय अनुसंधानकर्ताओं को अपने प्रतिदर्श के आकार तथा रूपरेखा तथा सीमांत त्रुटि के बारे में अवश्य बताना चाहिए।

सर्वेक्षण विधि की मुख्य विशेषता यह है कि यह अपेक्षाकृत कम समय तथा धन के द्वारा जनसंख्या के बारे में विस्तृत परिप्रेक्ष्य उपलब्ध कराती है। प्रतिदर्श जितना बड़ा होगा, इसके सही प्रतिनिधि होने के अवसर उतने ही ज़्यादा होंगे। यहाँ अत्यधिक महत्त्वपूर्ण उदाहरण जनगणना का है जिसमें पूरी जनसंख्या शामिल है। व्यवहार में प्रतिदर्श का आकार 30–40 से लेकर हज़ारों में हो सकता है (राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन पर बॉक्स देखें)। केवल प्रतिदर्श का आकार ही महत्त्वपूर्ण नहीं है, इसके चयन का तरीका ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है। वास्तव में, प्रतिदर्श चयन के बारे में निर्णय प्राय: व्यावहारिक विचार विमर्श पर आधारित होते हैं।

उन परिस्थितियों में, जिनमें जनगणना का उपयोग व्यावहारिक तौर पर न किया जा सकता हो, वहाँ पर संपूर्ण जनसंख्या के अध्ययन हेतु सर्वेक्षण ही अध्ययन के उपलब्ध साधन होते हैं। सर्वेक्षण का महत्त्वपूर्ण लाभ यह है कि यह एक समग्र तसवीर उपलब्ध कराता है अर्थात यह एक व्यक्ति के स्थान पर सामूहिकता के आधार पर बनी तसवीर दिखाता है। बहुत सी सामाजिक समस्याएँ तथा मुद्दे इस समग्र स्तर पर दिखाई देते हैं, इन्हें खोज के अत्यधिक सूक्ष्म स्तरों पर पहचाना नहीं जा सकता।

तथापि अन्य अनुसंधान पद्धतियों की तरह से सर्वेक्षणों की भी अपनी कमज़ोरियाँ होती हैं। यद्यपि इसमें व्यापक विस्तार की संभावना होती हैं, यह विस्तार की गहनता के मूल्य पर प्राप्त किया जाता है। सामान्यतया एक बड़े सर्वेक्षण के भाग के रूप में उत्तरदाताओं से गहन सूचना प्राप्त करना संभव नहीं होता। उत्तरदाताओं की संख्या अधिक होने के कारण प्रत्येक व्यक्ति पर व्यय किया जाने वाला समय सीमित होता है। साथ ही अन्वेषकों की अपेक्षाकृत बड़ी संख्या द्वारा सर्वेक्षण प्रश्नावलियाँ उत्तरदाता को उपलब्ध कराई जाती हैं, यह सुनिश्चित करना कठिन हो जाता है कि जटिल प्रश्नों या जिन प्रश्नों के लिए विस्तृत सूचना चाहिए, उन्हें उत्तरदाताओं से ठीक एक ही तरीके से पूछा जाएगा। प्रश्न पूछने या उत्तर रिकार्ड करने के तरीके में अंतर होने पर सर्वेक्षण में त्रुटियाँ आ सकती हैं। यही कारण है कि किसी भी सर्वेक्षण के लिए प्रश्नावली (कभी–कभी इन्हें 'सर्वेक्षण के उपकरण' भी कहा जाता है) की रूपरेखा सावधानीपूर्वक तैयार करनी चाहिए क्योंकि इसका प्रयोग अनुसंधानकर्ता के अतिरिक्त अन्य व्यक्तियों द्वारा किया जाएगा, अत: इसके प्रयोग के दौरान इसमें त्रुटि को दूर करने या संशोधित करने की थोड़ी बहुत संभावना रहती है।

अन्वेषक तथा उत्तरदाता के बीच क्योंकि किसी प्रकार के दीर्घकालिक संबंध नहीं होते तथा इसके कारण कोई आपसी पहचान या विश्वास नहीं होता। किसी भी सर्वेक्षण में पूछे गए प्रश्न ऐसे होने चाहिए जो कि अजनबियों के मध्य पूछे जा सकते हों तथा उनका उत्तर दिया जा सकता हो। कोई भी निजी या संवेदनशील प्रश्न नहीं पूछा जा सकता या अगर पूछा भी जाता है तो इसका उत्तर सच्चाईपूर्वक देने के स्थान पर 'सावधानीपूर्वक' दिया जाता है। इस प्रकार की समस्याओं को कभी–कभी 'गैर–प्रतिदर्श त्रुटियाँ' कहा जाता है। अर्थात ऐसी त्रुटियाँ जो

प्रतिदर्श की प्रक्रिया के कारण न हो अपितु अनुसंधान रूपरेखा में कमी या त्रुटि के कारण हो या इसके कार्यान्वयन की विधि के कारण हो। दुर्भाग्यवश इनमें से कुछ त्रुटियों का पता लगाना तथा इनसे बचना कठिन होता है। इस कारण से सर्वेक्षणों में गलती होना तथा जनसंख्या की विशेषताओं के बारे में भ्रामक या गलत अनुमान लगाना संभव होता है। अंत में, किसी भी सर्वेक्षण की सबसे महत्त्वपूर्ण सीमा यह है कि इसे सफलतापूर्वक पूरा करने के लिए इन्हें कठोर संरचित प्रश्नावली पर आधारित होना पड़ता है। हालाँकि प्रश्नावली की रूपरेखा चाहे कितनी भी अच्छी क्यों न हो, इसकी सफलता अंत में अन्वेषकों तथा उत्तरदाताओं की अंत:क्रियाओं की प्रकृति पर और विशेष रूप से उत्तरदाता की सद्‌भावना तथा सहयोग पर निर्भर करती है।

साक्षात्कार

साक्षात्कार मूलत: अनुसंधानकर्ता तथा उत्तरदाता के बीच निर्देशित बातचीत होती है, हालाँकि इसके साथ कुछ तकनीकी पक्ष जुड़े होते हैं। प्रारूप की सरलता भ्रामक हो सकती है क्योंकि एक अच्छा साक्षात्कारकर्ता बनने के लिए व्यापक अनुभव तथा कौशल होना ज़रूरी होता है। साक्षात्कार, सर्वेक्षण में प्रयोग की गई संरचित प्रश्नावली तथा सहभागी प्रेक्षण पद्धति की तरह पूर्णरूप से खुली अंत:क्रियाओं के बीच स्थान रखता है। इसका सबसे बड़ा लाभ प्रारूप का अत्यधिक लचीलापन है। प्रश्नों को पुन:निर्मित किया जा सकता है या अलग ढंग से बताया जा सकता है; बातचीत में हुई प्रगति (या प्रगति कम होने पर) के अनुसार विषयों या प्रश्नों का क्रम बदला जा सकता है; जिन विषयों पर अच्छी सामग्री मिल रही हो, उन्हें विस्तारित किया जा सकता है तथा जिन मामलों में प्रतिकूल प्रतिक्रियाएँ हो रही हों, उन्हें संक्षिप्त रूप दिया जा सकता है या किसी अन्य अवसर पर बाद में जानने हेतु स्थगित किया जा सकता है और यह सब साक्षात्कार के दौरान किया जा सकता है।

दूसरी तरफ़ साक्षात्कार पद्धति के रूप में साक्षात्कार से संबंधित लाभों के साथ अनेक हानियाँ भी हैं। इसका यही लचीलापन उत्तरदाता की मनोदशा बदल जाने के कारण या फिर साक्षात्कार करने वाले की एकाग्रता में त्रुटि होने के कारण साक्षात्कार को कमज़ोर बना देता है। इस प्रकार इस अर्थ में यह एक अविश्वसनीय तथा अस्थिर प्रारूप है जो जब कार्य करता है तो बहुत अच्छा करता है तथा जब असफ़ल होता है तो बहुत बुरी तरह से होता है।

साक्षात्कार लेने की अनेक शैलियाँ हैं तथा इससे संबंधित विचार तथा अनुभव लाभों के अनुसार बदलते रहते हैं। कुछ व्यक्ति अत्यंत असंरचित प्रारूप को प्राथमिकता देते हैं जिसमें वास्तविक प्रश्नों के स्थान पर विषय की जाँच सूची ही होती है। अन्य व्यक्ति इसके संरचित रूप को वरीयता देते हैं जिसमें सभी उत्तरदाताओं से विशेष प्रश्न पूछे जाते हैं। परिस्थितियों तथा वरीयताओं के अनुसार साक्षात्कार को रिकार्ड करने के तरीके भी अलग–अलग हैं जिनमें वास्तविक वीडियो या ऑडियो रिकार्ड करना, साक्षात्कार के दौरान विस्तृत नोट तैयार करना,

या स्मरण शक्ति पर निर्भर करना और साक्षात्कार समाप्त होने पर इसे लिखना शामिल है। रिकार्ड करने वाले या इसी प्रकार के अन्य उपकरणों का बार-बार प्रयोग करने से उत्तरदाता असामान्य महसूस करता है तथा इससे बातचीत में काफ़ी हद तक औपचारिकता आ जाती है। दूसरी तरफ़ जब रिकार्ड करने की अन्य कम व्यापक विधियों का प्रयोग किया जाता है तो कभी-कभी महत्त्वपूर्ण सूचना छूट जाती है या रिकार्ड नहीं हो पाती है। कभी-कभी साक्षात्कार के समय की भौतिक या सामाजिक परिस्थितियाँ भी रिकार्ड के माध्यम को निर्धारित करती हैं। बाद में प्रकाशन के लिए साक्षात्कार को लिखने या अनुसंधान रिपोर्ट के हिस्से के रूप मे लिखने का तरीका भी भिन्न हो सकता है। कुछ अनुसंधानकर्ता प्रतिलिपि को संपादित करना तथा इसे 'स्पष्ट' नियमित वर्णनात्मक रूप से प्रस्तुत करना पसंद करते हैं; जबकि दूसरे मूल वार्तालाप को यथासंभव वैसा ही बनाए रखना चाहते हैं तथा इसके लिए वे हर संभव प्रयास करते हैं।

साक्षात्कार को प्रायः अन्य पद्धतियों के साथ अनुपूरक के रूप में विशेषतया सहभागी प्रेक्षण तथा सर्वेक्षणों के साथ प्रयुक्त किया जाता है। 'महत्त्वपूर्ण सूचनादाता' (सहभागी प्रेक्षण अध्ययन का मुख्य सूचनादाता) के साथ लंबी बातचीत से प्रायः संकेंद्रित जानकारी प्राप्त होती है जो साथ में लगाई गई सामग्री को स्पष्ट करती है तथा सही स्थान प्रदान करती है। इसी तरह से गहन साक्षात्कारों द्वारा सर्वेक्षण के निष्कर्षों को गहनता तथा व्यापकता प्राप्त होती है। हालाँकि एक पद्धति के रूप में साक्षात्कार व्यक्तिगत पहुँच पर और उत्तरदाता तथा अनुसंधानकर्ता के आपसी संबंधों या आपसी विश्वास पर निर्भर होता है।

शब्दावली

जनगणना–एक व्यापक सर्वेक्षण जिसमें जनसंख्या के प्रत्येक सदस्य के बारे में जानकारी प्राप्त की जाती है।

वंशावली–एक विस्तृत वंशवृक्ष जो विभिन्न पीढ़ियों के सदस्यों के पारिवारिक संबंधों को दर्शाता है।

गैर-प्रतिदर्श त्रुटि–पद्धतियों के प्रयोग और प्रारूप के कारण सर्वेक्षण परिणामों में हुई त्रुटियाँ।

जनसंख्या–सांख्यिकीय अर्थ में, एक बड़ा निकाय (व्यक्तियों, गाँवों, घरों, इत्यादि का) जिससे प्रतिदर्श का चयन किया जाता है।

संभाविता–(सांख्यिकीय अर्थ में) किसी घटना के घटित होने या न होने की संभावना।

प्रश्नावली–साक्षात्कार या सर्वेक्षण में पूछे जाने वाले प्रश्नों की लिखित सूची।

यादृच्छिकीकरण–यह सुनिश्चित करना कि कोई घटना (जैसे किसी प्रतिदर्श में किसी विशेष वस्तु का चयन) विशुद्ध रूप से केवल अवसर पर ही निर्भर हो, न कि किसी अन्य पर।

प्रतिबिंबिता–एक अनुसंधानकर्ता की वह क्षमता जिसमें वह स्वयं का प्रेक्षण और विश्लेषण करता है।

प्रतिदर्श–एक बड़ी जनसंख्या से लिया गया उपभाग या चयनित हिस्सा, जो उस बड़ी जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता है।

प्रतिदर्श त्रुटि–ऐसी त्रुटि जिससे सर्वेक्षण के परिणामों में बचा नहीं जा सकता क्योंकि यह समग्र जनसंख्या पर आधारित होने के स्थान पर सिर्फ़ एक छोटे प्रतिदर्श से प्राप्त जानकारी पर आधारित होती है।

स्तरीकरण–सांख्यिकीय अर्थ के अनुसार जनसंख्या के संबंधित आधारों जैसे लिंग, स्थान, धर्म, आयु इत्यादि के आधार पर विभिन्न समूहों में उप-विभाजन।

अभ्यास

1. वैज्ञानिक पद्धति का प्रश्न विशेषतः समाजशास्त्र में क्यों महत्त्वपूर्ण है?
2. सामाजिक विज्ञान में विशेषकर समाजशास्त्र जैसे विषय में 'वस्तुनिष्ठता' के अधिक जटिल होने के क्या कारण हैं?
3. वस्तुनिष्ठता को प्राप्त करने के लिए समाजशास्त्री को किस प्रकार की कठिनाइयों और प्रयत्नों से गुज़रना पड़ता है?
4. 'प्रतिबिंबता' का क्या तात्पर्य है तथा यह समाजशास्त्र में क्यों महत्त्वपूर्ण है?
5. सहभागी प्रेक्षण के दौरान समाजशास्त्री और मानवविज्ञानी क्या कार्य करते हैं?
6. एक पद्धति के रूप में सहभागी प्रेक्षण की क्या-क्या खूबियाँ और कमियाँ हैं?
7. सर्वेक्षण पद्धति के आधारभूत तत्त्व क्या हैं? इस पद्धति का प्रमुख लाभ क्या है?
8. प्रतिदर्श प्रतिनिधित्व चयन के कुछ आधार बताएँ?
9. सर्वेक्षण पद्धति की कुछ कमज़ोरियों का वर्णन करें?
10. अनुसंधान पद्धति के रूप में साक्षात्कार के प्रमुख लक्षणों का वर्णन करें।

सहायक पुस्तकें

बूमन, ज़गमुंट. 1990. *थिंकिंग सोशियोलॉजिकली*. बासिल ब्लेकवैल, ऑक्सफ़ोर्ड यूनिर्वसिटी प्रेस, नयी दिल्ली।

बेकर, हॉवर्ड एस. 1970. *सोशियालॉजिकल वर्क : मैथेड एंड सबस्टेंस*. द पेंगुइन प्रेस, एलेन लेन।

बेते, आंद्रे और मदन, टी.एन. (सं). 1975. *एनकाउंटर एंड एक्सपीरियंस : पर्सनल एकाउंटस ऑफ़ फ़ील्डवर्क*. विकास पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली।

बरज़स, रोबर्ट जी. (सं). 1982. *फ़ील्ड रिसर्च : ए सोर्सबुक एंड फ़ील्ड मैन्युअल.* जार्ज एलेन एंड अनविन, लंदन।

कोज़र, लेविस. रिया, ए.बी. स्टीफन पी.ए. और नॉक, एस.एल. 1983. *इंट्रोडक्शन टू सोशियोलॉजी*. हरकोर्ट ब्रेस जोहनोविच, न्यूयार्क।

श्रीनिवास, एम.एन., शाह ए.एम. और रामास्वामी, ई.ए. (सं). 2002. द *फ़ील्डवर्कर एंड द फ़ील्ड : प्रॉब्लम्स एंड चैलेंजेस इन सोशियोलॉजिकल इंवेस्टीगेशन*. द्वितीय संस्करण, ऑक्सफ़ोर्ड यूनिर्वसिटी प्रेस, नयी दिल्ली।